भावनाओं की परछाइयाँ

लघु कहानी संग्रह

शबनम शर्मा

All About Names © Misty Sunset

सम्पादकीय

कोई कल्पना भाव या विचार मष्तिक के किसी कोने से कागज पर उतरता है तो वास्तव में वह अपने आसपास के जीवन ,रीति – रिवाज़ ,सामाजिक गतिविधियाँ (अच्छाई बुराई), प्रेम – विरह , भाईचारा – दुश्मनी को ही चित्रित करता है ।

‘ कहानी ‘ इन्ही सामाजिक गतिविधियों का प्रतिबिम्ब होती है । ये पृथक बात है कि कथाकार अपने बुद्धि कौशल से अपनी लिखी कहानियों में उन तथ्यों का समावेश कर दे जो सामाजिक आडम्बर , कुरीतियों बुराईयों,अशिक्षा आदि को समाज के सामने एक सुव्यवस्थित तरीके से प्रस्तुत करने के साथ – साथ समाज को इनसे दुष्प्रभाव के प्रति सचेत करे ।

मित्रों हम सभी के लिए ये एक हर्ष की बात है कि हमारी website साहित्यकारों रचनाकारों के विकास और सम्मान के लिए प्रतिबद्ध है । इसी दिशा में सभी नए और पुराने रचनाकारों की रचनाएँ प्रतिदिन website पर प्रकाशित कर उनकी भावनाओं को साहित्य प्रेमी पाठकों तक पहुचाया जाता है।

साहित्य साधना की दिशा में एक और कदम बढ़ाते हुए www.kavyasagar.com साहित्यकारों के संग्रह प्रकाशन को न्यूनतम लगत मात्र में E book का प्रकाशन अपनी वेबसाइट पर करने का निर्णय लिया है । इसी क्रम में website पर कहानी संग्रह , काव्य संग्रह , ग़ज़ल संग्रह प्रकाशित किया जाना प्रस्तावित है।

रचानाकरारों और पाठकों का सहयोग सादर अपेक्षित है ।

प्रबन्ध समिति ,

www.kavyasagar.com

दो शब्द

शबनम शर्मा को हिंदी साहित्य में बहुआयामी प्रतिभा की प्रतिमूर्ति कहें तो कोई अतिश्योक्ति नहीं होगी । आपने कविता , कहानियाँ , लघु कथा लेख आदि हिंदी साहित्य के हर क्षेत्र में भारतीय समाज को अपना अमूल्य योगदान दिया है , यही नहीं इसी के साथ आपने हज़ार से अधिक गज़लें लिख कर अपनी लेखन प्रतिभा की एक अनूठी मिशाल प्रस्तुत की है ।

हम शबनम शर्मा की लिखी लघु कहानियों का संग्रह प्रस्तुत करने जा रहे हैं । आपने अपनी छोटी – छोटी कहानियों के माध्यम से भारतीय समाज के हर पहलू को दिल की तह तक छू लिया है । आपकी कहानियाँ पाठक की भावनाओं को आह्लादित तो करती ही हैं साथ में सामाजिक कुरीतियों पर एक कठोर प्रहार करती दीखती हैं ।

कहानी संग्रह में प्रकाशित आपकी कहानी ' तेरहवीं ' में आप बुजुर्गों की सेवा नहीं करने किन्तु उन्ही के मरणोपरांत किये जाने वाले अनावश्यक व्यय पर कड़े सवाल उठाती हैं तो अन्य कहानी ' रस्म ' में पिता की मृत्यु के पश्चात् किये जाने वाले संस्कारों को एक बेटी द्वारा कराये जाकर सामाजित रुढियों पर गहरी चोट करती हैं । अपनी एक अन्य कहानी 'माँ' में माँ का अपनी बेटी के प्रति देर से आने पर दर और गुस्सा तथा बेटी का माँ के प्रति प्यार को बड़े ही सुन्दर तरीके से दर्शाया जाकर सभी को सन्देश दिया है कि आज बेटियाँ बेटों के सामान ही हैं ।

इसी प्रकार शबनम जी जी सभी कहानियाँ यथा – कुंठा ,समझौता , कलयुगी बेटा , वह – युवक आदि समाज को आईना दिखाती प्रतीत होती हैं ।

मैं परम पिता परमेश्वर से प्रार्थना करता हूँ कि शबनम शर्मा जी की इस वटवृक्ष रूपी छाया में भारतीय साहित्य सदा फूलता फलता रहे ।

प्रताप सिंह नेगी

परिचय

नाम : शबनम शर्मा

जन्म : जनवरी 20,1956, जन्म स्थान: नाहन

शिक्षा : बी.ए., बी.एड.

सम्प्रति : अध्यापन

उद्देश्य : सरल भाषा में अपनी आवाज़ जन-जन तक पहुँचाना व नए लेखकों प्रोत्साहन देना। समाज को काव्य व लेखन कला से अवगत करवाना व अपने में छुपी समस्त कला व अनुभूतियो को जनसम्पर्क तक पहुँचाना।

प्रकाशन: अनमोल रत्न (काव्य संग्रह), काव्य कुँज (काव्य संग्रह)
करीब 1300 ग़ज़लें, 2500 कवितायें, 10 कहानियाँ, 160 लघुकथायें और 20 के करीब ज्वलंत मुद्दों पर लेख।
प्रकाशित:समाचार पत्रों में - दैनिक ट्रिब्यून, दिव्य हिमाचल, अजीत समाचार, भास्कर, राँची एक्सप्रैस, गिरीराज, श्रोता समाचार, हिमवंती, हिम सूर्य, हिम सत्ता, इण्डिया गैप्स टुडे और सामाजिक आक्रोश
पुस्तकें:आइना-ए-ग़ज़ल (बम्बई), सर्जक (वियोग), झरोखा-2000 (हैदराबाद), संकल्पना (प्रतापगढ़), सहर (प्रतापगढ़), प्रवाह (रामपुर), काव्य रश्मि (नाहन), अभियान (बम्बई),गंगोत्री (बालाघाट), शताब्दी रत्न निदेशिक (पानीपत), समर्थन (नाहन), अमृत कलश (खंडवा) और हे मातृभूमि (नैमिश्रणाय)
पत्रिकायें: हतिगन्धा (पंचकूला), जगमगदीप (अलवर), फ्रिकरोफन (शिमला), ,
समाज प्रवाह (बम्बई), रैन-बसेरा (अहमदाबाद), प्रगति पथ (बुलन्द शहर),शुभ तारिका (अम्बाला), राजकला (लखनऊ), हिम ज्योति (शिमला), डैफोडिल्ज़ (नाहन),चौगान(नाहन), सुरभि (नाहन), सौहार्द (इलाहाबाद), प्रत्याक्षी, नालन्दा दर्पण (नालन्दा),पत्रकार सुमन (प्रतापगढ़), वाभंगी (मथुरा), गंगोत्री (बालाघाट), समर्थन, मरु-गुलशन (जोधपुर), त्रिवेणी साहित्य (गाज़ियाबाद), रेणुका स्मारिका (रेणुका), अखिल भारतीय होम्योपैथिक पत्रिका (खुरजा), सरोपशा (दसूहा), नारी अस्मिता (बढ़ोदरा), सतयुग की वापसी (अलवर), भैरवसुख सागर (अहमदाबाद), शब्द (लखनऊ), सौगात (बारां), शिवम (भोपाल), सुरभि समग्र (लखनऊ), दस्तक (बहादुरगढ़) और संदर्भ (रांची), में ग़ज़लें कवितायें, लेख व कहानियों का प्रकाशन। करीब 600 कविताएँ, कुछ कहानियाँ, लघु कथाएँ उपर्युक्त पत्रिकाओं, अखबारों में प्रकाशित।

विशेष :	स्वरचित भजनों की कैसेट बाज़ार में।
सफलता एवं सम्मान :	शताब्दी रत्न (पानीपत), सुरभि साहित्य (बम्बई), आर्चाया (पानीपत), ग़ज़ल श्री (कप्तानगंज), महादेवी वर्मा सम्मान (मथुरा), कवयित्री सम्मान (दिल्ली), काव्यमहारथी(इलाहाबाद), कवयित्रीसम्मान(स्टेपको, नाहन), कवयित्री सम्मान (कृपालशिला गुरुद्वारा, पाँवटा साहिब), ग़ज़ल रत्न (बम्बई), महिला रत्न (खंडवा), 'स्व. मुकीम पटेल सम्मान' (बालाघाट, म.प्र.), 'साहित्य रत्न' (राम साहित्य मंडल,नाहन), 'कवयित्री सम्मान' (प्रतापगढ़), 'कवयित्री सम्मान' (लायन्स कल्ब, नाहन), 'काव्य प्रज्ञ'(रामपुर यू.पी.), साहित्य कुम्भ "रत्नश्री", हिम आभा (रेणुका), रत्न श्री (बम्बई), उत्कृष्ट साहित्यिक सेवा हेतू कहानी महाविद्यालय अम्बाला से सम्मानित।
कवि सम्मेलन	करीब 100 कवि सम्मेलनों में भागीदारी। स्थानीय, राज्य स्तरीय, राष्ट्र स्तरीय।
रुचि :	ग़ज़लें लिखना व सुनना।
सम्पर्क :	**शबनम शर्मा** अनमोल कंुज, पुलिस चैकी के पीछे, मेन बाजार, माजरा, तह. पांवटा साहिब, जिला सिरमौर, हि.प्र. - 173021
मोब. -	09816838909, 09638569237 shabnamsharma2006@yahoo.co.in

तेरहवीं

शाम को एक छोटा सा कार्ड बिना दरवाज़ा खटखटाए कोई फेंक गया। रात को मुन्ना हाथ में लिये मुझे दिखा रहा व बोला, ''अम्मा, पिछली गली वाली दादीजी की तेरहवीं है। कल दोपहर का खाना है व 2 से 3 बजे तक पगड़ी की रसम।'' उसके बताते ही मेरे शरीर में बिजली सी कौंध गई। मेरा अच्छा-खासा प्यार था उनसे। दूसरे दिन मैं समयानुसार उनके पिछले वाले बड़े से आँगन में पहुँच गई। बड़ा सा शामियाना, आज़ाद टैंट वालों का इन्तज़ाम। खाना सजा हुआ, लोग घूम-घूमकर चटकारे लेकर खाते हुए। सिर्फ कमी थी तो ये कि डी.जे. के अष्लील गानों पर लोग नाच नहीं रहे थे। माहौल चुपचाप खाकर, लिफ़ाफा पकड़ाकर जाने का था। कोने में खड़ी-खड़ी मैं ये दृष्य देख रही थी कि अचानक मेरा ध्यान दादी की उस स्थिति पर चला गया, जब मैं उन्हें आखिरी बार मिलने गई थी। ढीली खाट, जिस पर बिछी चादर न जाने कब बिछाई गई थी। गुच्छा-गुच्छा होकर दादी के बदन को तंग कर रही थी, दादी कभी इधर से सीधी करतीं कभी उधर से। तकिया बेहाल था। कमरे में ज़ीरो वॉट का बल्ब था। न कोई खिड़की, न झरोखा। पास में एक प्लास्टिक की टूटी बालटी पड़ी थी। सुबह-सुबह पानी का लोटा, गिलास रख दिया जाता। लाख आवाज़ें देने पर भी कोई न आता। हरिया भागता-भागता कभी-कभी चाय का गिलास, दो रस दे जाता। दादी बेचारी हाँफती-हाँफती उठती, मुष्किल से नहाती, धोती, अपने अस्त-व्यस्त बाल अपने हाथों से सुलझाती। कभी किसी से कोई षिकायत न करती। कोई हाल पूछता तो कहती, ''बेटा बुढ़ापा ही तो सबसे बड़ी बीमारी है।'' तरस आता उन्हें देखकर। किसी के पास वक्त न था उन्हें कुछ पूछने का, उनकी सेवा करने का, पर आज ये लाखों रूपये खर्च कर दिखावा क्यूँ?

रसम

छुट्टियों के बाद स्कूल में मेरा पहला दिन था। नीना को सामने से आता देख मुझे अचम्भा सा हुआ। वह स्कूल की पी.टी. अध्यापिका है। पूरा दिन चुस्त-दुरुस्त, मुस्काती, दहाड़ती, हल्के-हल्के कदमों से दौड़ती वह कभी भी स्कूल में देखी जा सकती है। आज वह, वो नीना नहीं कुछ बदली सी थी। उसने अपने सिर के सारे बाल मुंडवा दिये थे। काली शर्ट व पैंट पहने कुछ उदास सी लग रही थी। कुछ ही समय में पता चला कि इन छुट्टियों में उसके पापा की मृत्यु हो गई थी। सुनकर बुरा लगा। शाम को मैं करीब चार बजे उसके घर गई। उसने मुझे बैठक में बिठाया। पानी लाई व मेरे पास बैठ गई। पूछने पर पता चला कि उसके पिता की मृत्यु हृदय गति रूकने के कारण हुई थी। रात का समय था, वह उन्हें अस्पताल ले गई जहाँ डाक्टरों ने उन्हें मृत घोषित कर दिया। घर आकर उसने अपने रिष्तेदारों को पिता जी मृत्यु की सूचना दे दी। सुबह पूरा जमघट लग गया। सवाल कि संस्कार पर कौन बैठेगा? चाचा के 3 बेटे थे। तीनों खिसक लिये। समय का अभाव था। नीना की दो बड़ी बहनें शादीषुदा थी, उनके बच्चे व पति भी व्यस्त थे। वह 10 दिन बैठ नहीं सकते थे। लाष को उठाने से पहले यह कानाफुसी नीना तक पहुँच गई। वह माँ के पास बैठी थी। उसने आँसू पोंछे व पिछवाड़े वाले ताऊजी से कहा जो रात से उनके साथ थे, "ताऊजी, मैं करूँगी पिताजी का अन्तिम संस्कार, मैं बैठूँगी सारी पूजा पर।" सबके दाँतों तले अंगुली आ गई। पर नीना ने किसी की परवाह न की। कंधे पर सफ़ेद कपड़ा रख कर, सबसे पहले अपने पापा की लाष को कंधा दिया व शमषान तक पूरी विधिपूर्वक सब कार्य किया। बताते-बताते उसकी आँखें कई बार नम हुई। बोली, "मैडम, मेरे पापा उकसर कहते थे मेरी दो बेटियाँ, एक बेटा है। मुझे क्या पता था कि आज....." मैंने उसके कंधे पर हाथ रखा और कहा, "नीना, मुझे तुझ पर गर्व है।"

माँ

आदत है हर रोज़ शाम को मन्दिर जाकर कुछ समय बिताने की। दिवाली थी उस दिन। पूरा दिन काफ़ी व्यस्त रही, शाम को भी काम खत्म नहीं हो रहा था। पर मन था कि एक चक्कर मन्दिर का काट आऊँ। जैसे-तैसे काम निबटाकर मैं मन्दिर चली गई। मन्दिर का पुजारी उस अहाते में ही छोटी सी कुटिया में रहता था। मन्दिर में माथा टेक कर मैं पुजारी जी के पास कुछ देने चली गई। देखा पुजारी जी घर में पूजा कर रहे थे व उनकी आँखों से बरबस आँसू टपक रहे थे। मैं भी जूते उतार कर धीरे से वहां बैठ गई। 5-10 मिनट बाद उन्होंने आँखें खोली। मुझे देखकर बोले, ''माफ़ करना बिटिया, कुछ भावुक हो गया। देखो ये मेरी माँ की तस्वीर, मैं आज के दिन इसकी पूजा करता हूँ। आपको बताऊँ, हम 9 भाई-बहन थे, मेरा बाप शराबी था, दिवाली से 4 दिन पहले ही जुआ खेलने बैठ जाता था, मेरी गरीब माँ, फटे-पुराने कपड़ों में, प्लास्टिक की चप्पल पहने, कमज़ोर सी देह में लोगों के घरों में बासन माँजती, झाड़ू-फटका करती। इन दिनों लोग उससे बहुत काम लेते, घर साफ़ करवाते, कपड़े धुलवाते, बासन मंजवाते, फिर कहीं मिठाई का डिब्बा और 5 रू. देते। वह सारी थकान भूल जाती व सामान लाकर हमारे सामने खोलकर रख देती। हम सब भाई-बहन बिन कुछ महसूस किये खुष हो-होकर, शोर मचाकर खाते। बस हमारी दिवाली मन जाती। आज सब कुछ है पर माँ नहीं है।'' कहकर वे फिर से रोने लगे।

इन्तज़ार

रात गहराती जा रही थी। मेरा मन बहुत घबरा रहा था। मेरी बेटी शाम 4 बजे से यह कहकर गई थी कि वो 2-2) घंटे में वापस आ जायेगी। मैंने उसे अनगिनत फोन कर डाले। फोन मिलने का नाम ही नहीं ले रहा था। 'अनरिचेबल' की टोन ने मुझे और भी परेशान कर दिया। आखिर माथे पर हाथ रखकर, थक हार कर, एक पिटे ज्वारी की तरह मैं अपने कमरे में बैठ गई। पर मनगडंत प्रश्नों-उत्तरों का सिलसिला मुझे बार-बार झकझोर रहा था। एक पल भी मुझे एक बरस की तरह लग रहा था। ज़माना कितना खराब है? लड़की की जात, ऊपर से सर्दियों के दिन, ये दिल्ली जैसा शहर और अकेली लड़की। बेचैनी बढ़ती जा रही थी कि दरवाजे पर घंटी बजी। मैं बिजली की तरह दरवाज़े की ओर लपकी। दरवाज़ा खोला कि सामने मेरी बेटी हाथ में फूल का गुलदस्ता व कुछ पैकेट, मुस्कान होठों पर लिये खड़ी थी। उसको मुस्कुराता देख मेरा गुस्सा सातवें आसमान पर चढ़ गया। मैंने एक जोरदार थप्पड़ उसके मुंह पर मार दिया व लगी बोलने। वह अवाक सी खड़ी सुनती रही। उसकी आँखों से आँसू बहने लगे, पर मैं अपनी पूरी बात कह कर ही चुप हुई। उसने फिर भी मुझे बाँहों में भरा और कहा, "माँ, तू इतनी परेशान हुई, इसके लिए मुझे माफ़ कर दे। पर सुन, आज जब मैं गई तो रास्ते में मेरा फोन किसी ने निकाल लिया और तू कल वापस जा रही है। तुझे पता है, मुझे आज पहली पगार मिली थी, मैं तेरे लिये ये तोहफा लेने गई थी, मुझे देर हो गई, तो मैंने अपनी सहेली को बुला लिया, जो अभी दरवाज़े के बाहर ही खड़ी है। माँ, चुप हो जा, शाँत हो जा और देख, खोल इस पैकेट को, कैसा लगा तुझे।" इतने में उसकी सहेली भी अन्दर आ गई, बोली, आँटी, "इसे कुछ पसंद ही नहीं आ रहा था, बार-बार कह रही थी, अम्मा को ऐसी चीज़ दूँगी कि वो खुश हो जायें।" मैंने उन दोनों को गले लगा लिया और ताकने लगी शून्य में।

समझौता

अध्यापिका हूँ। हर रोज़ अलग-अलग बच्चों से वासता पड़ता है। कक्षा में जाना, पढ़ाना, बच्चों से बतियाना, उनकी नन्हीं-नन्हीं समस्याओं को सुलझाना मेरा शौक है। इस कक्षा में जाते मुझे करीब 6 माह हो गये थे। दो जुड़वाँ भाई-बहन को पढ़ाती हूँ। जहाँ बहन अति शान्त, कुशल व स्नेही वहीं भाई शरारती, बातूनी व कभी-कभी लापरवाह। उससे मेरी उम्मीदें कुछ ज्यादा ही बढ़ने लगी। हमेशा उसमें सुधार लाने की इच्छा ने मुझे उसके करीब ला दिया। परन्तु बात न मानना तो जैसे उसका संकल्प सा हो। वह अपनी मनमानी करता परन्तु पलटकर न तो कभी जवाब देता न ही सही काम करता। परीक्षा हुई। परिणाम भी मेरी आशा से कम था। उसकी कुशाग्र बुद्धि से ज़्यादा उम्मीदें की जा सकती थी। मैंने उसके माता-पिता को संदेश भिजवा कर मिलने का आग्रह किया। निश्चित समय पर उसके माता-पिता अपने बच्चों के साथ मेरे पास आए। पिता ने पूछा, "मैम, आपने बुलाया था, क्या कोई समस्या है?" मैंने बच्चों की ओर देखा, दोनों के चेहरे पीले हो गये थे। मैंने कहा, "इन्होंने क्या कहा?" पलटकर पिता ने कहा, "ये क्या कहेंगे, रात को बताया कि कल रिजल्ट है और मैम ने आपको बुलाया है। मैडम मैं आपको एक बात बताना चाहता हूँ इससे पहले कि आपकी सुनूं। मैंने 7 माह पहले शादी की है। ये बेटी मेरी पहली पत्नि की है, जो पिछले बरस गुजर गई और लड़का इनका है (अपनी पत्नि की और इशारा करते हुए) इसका पापा भी पिछले बरस गुजर गया। मेरी बहन ने यह रिश्ता सुझाया और हमने ब्याह कर लिया। जाने वाले तो चले गये, अब आगे की भी तो सोचनी है। हाँ, मैडम कहिए आप क्या बता रही थीं?" मैं उनकी बातें सुनकर स्तब्ध थी। मैंने दोनों बच्चों की ओर देखा जो अभी भी वैसे ही सहमे से खड़े थे। मैंने कहा, "बस यूं ही बुलाया आपको, आपके बच्चे नए हैं इस स्कूल में। पूछना था इन्हें कैसा लगा?" वह बोले, "ओर, शुक्रिया।" देख सकती थी अब मैं उन दोनों अधूरे बच्चों के मुँह पर लौटती रौनक।

कुंठा

रीमा आफिस में नई-नई आई है। देखने में सुन्दर, सुशील और बहुत ही सुलझी हुई। अपने काम से काम और फिर होठों पर सदा मुस्कराहट। यह सब देखते हुए मुझे कुछ तसल्ली सी न होती। वह पूरे स्टाफ में किसी के साथ भी घुल-मिल न पाई। बस सबके साथ औपचारिकता निभाती दिखाई देती। एक दिन ज़ोरों की बारिश हो रही थी कि आज आफिस में काम भी कुछ कम था। मेरे साथ उसका रिश्ता माँ-बेटी का सा है। मैंने कहा, ''रीमा चाय पीते हैं।'' उसने स्वीकारात्मक 'हाँ' भर दी। हम दोनों बैठे थे कि चाय आ गई व मैंने पूछा, ''रीमा शादी नहीं हुई अभी।'' ''नहीं।'' उसके बाद वह इधर-उधर ऐसे देखने लगी, जैसे कि कुछ गलत कह दिया हो मैंने। ''फिर कब कर रही है, मुझे मिठाई कब खिलाएगी।'' ''कभी नहीं।'' कह कर वह ज़ोर-ज़ोर से रोने लगी। मुझे लगा, मुझसे कोई बड़ी भूल हो गई है। मैंने उठकर उसे गले से लगाया। वह जी भर कर रोई व ''साॅरी'' कहकर बैठ गई। उसकी यह दशा देख मैं अन्दर तक हिल गई थी। कुछ सांत्वना भरे शब्द कहकर उसके कंधे पर हाथ रखकर कारण पूछा। उसने बताया वह मात्र 12 बरस की थी जब उसका ब्याह हुआ। वह ब्याह के मायने भी न समझती थी, ऊपर से ससुराल वालों की असीमित उम्मीदें, जिन पर वह ख़री न उतर पाई। उसके साथ सबका व्यवहार बद से बदत्तर हो गया और आखिर मात्र 13 साल 3 महीने की उम्र में उसे मार-पीटकर घर से निकाल दिया। वह पीहर आ गई। यहाँ उसके माता-पिता ने उससे वापस जाने को कहा पर वह न मानी। फिर उसने अपनी पढ़ाई जारी की और बी.काॅम. फिर एम.काॅम. किया। उसने बताया, उस पर किये जुल्म उसे आज भी सोने नहीं देते। वह फिर से रो पड़ी। इस बीच मैंने पूछा कि उसके

लगातार ...

पति ने दूसरी शादी कर ली। उसने बताया उसके 2 बच्चे भी हैं। पर वह शादी नहीं करेगी क्योंकि वो जानना चाहती है उसमें क्या कमी थी। उन लोगों ने ऐसा क्यों किया? मैंने उसे बिठाया, चुप कराया व समझाया, ‘‘देखो रीमा, कल कभी लौटता नहीं, और हर दिन एक सा होता नहीं। तब तुम मात्र 12-13 वर्ष की अबोध बालिका थी, अब इतनी सुन्दर, सलोनी, प्यारी सी लड़की हो। अगर किसी ने तुम्हारे बड़े होने का इन्तज़ार नहीं किया, तो तुम क्यों इस ज़िन्दगी को बरबाद कर रही हो और हाँ, तुमने कुछ नहीं खोया, उन्होंने एक अच्छी बहु खोई।’’ उसके चेहरे की रंगत बदल गई। मुझे खुशी है इस बात की, कि उसकी कुंठा को निकाल पाई मैं और पता चला कि उसने अब इरादा बदला है। नए जीवन की ओर पग बढ़ाया है।

फितरत

पिछले माह मुझे मिसेज गुरुंग के घर जाने का मौका मिला। रात गहरा गई थी। मौसम भी बहुत अच्छा था। सर्दी के साथ-साथ अच्छा खाना, सूखे मेवे व गरमा-गरम चाय-काॅफी ने समय बांध दिया था। हम दोनों ड्राईंग रूम में बैठे बतिया ही रहे थे कि उनकी दोनों लड़कियाँ अपने बच्चों के साथ घर में आ गईं। आते ही पर्स इधर फेंका, शाल कुर्सी के कोने पर टंगा दी और जूते अस्त-व्यस्त रख दिये, बच्चों ने अपना पूरा धमाल शुरु कर दिया। घर का माहौल क्षण भर में ही बदल गया। बच्चे रसोई की तरफ दौड़े, बोलते हुए, ''मामी जी भूख लगी है कुछ खाने को दो।'' लड़कियाँ भी आवाजें लगाने लगी, ''अरे, भाभी एक-एक कप चाय, पकौड़े हो जायें।'' बेचारी भाभी ''हां जी'' बोलकर रसोई की तरफ भागी। आध घंटे में सबकी फरमाइशें पूरी करके दस व्यक्तियों के खाने की तैयारी करने लगी। पता चला उसे चैथा महीना चल रहा है, पर किसी को भी परवाह नहीं। मुझसे रहा न गया। पूछ ही बैठी, ''मिसेज गुरुंग आपने लड़कियों की शादी लोकल की और ये जब-तब आएँ तो इससे काम नहीं बढ़ जाता, देखो दोनों जब से आई हैं, एक फोन पर, दूसरी टी.वी. के आगे और बच्चे धमाल किये हुए हैं, इससे बहू-बेटे के जीवन पर क्या असर पड़ेगा।'' उन्हें मेरी बात ज़रा न भाई। तपाक से बोलीं, ''मिसेज शर्मा, दोनों कमाती हैं, हर माह मेरे हाथ पर अच्छे पैसे रखती हैं। आखिर इन्हें पाला, पढ़ाया-लिखाया। शादी करके बेचा तो नहीं, इनका घर है जब चाहें आएँ-जाएँ, ससुराल में तो खटती ही है, यहाँ भी काम करें तो मायका क्या?'' मैंने पूछा, ''फिर इनके घर पर कौन देखभाल करता है?'' वह नाक-भौं तरेरकर बोली, ''इनकी माऐं यानि सासें और ननदें।'' मैं हैरान थी ये सब देख-सुनकर कि मेरी नजर उनकी बहू पर पड़ी जो

लगातार . . ..

1-1 किलो आटा गूंथ रही थी। मुझे उसकी तरफ देखते ही मिसेज गुरुंग बोली, ‘‘गरीब घर की है, बाप भी नहीं, माँ है भाई के साथ रहती है। जान-बूझकर लाये इसे, घर का काम तो करे और दो रोटी खाती रहे व पड़ी रहे।’’ मेरे लिये अब रुकना मुहाल हो गया इस फितरती माहौल में। मैं उठी और भारी कदमों से घर वापिस आ गई।

कलयुगी बेटा

मैं किसी काम से बैंक में बैठी थी। कार्य कुछ ज्यादा होने की वजह से मैं मैनेजर के चैम्बर में चली गई। अकेली थी काम ज्यादा। कुछ फार्म भरकर मैंने मैनेजर साहब को थमाए। उन्होंने मुझे बैठने व कुछ देर और इन्तज़ार करने को कहा। मैं बैठ कर इधर-उधर आए लोगों को निहारने लगी कि बैंक के मेन गेट से लम्बा, ऊँचा, सुन्दर सा युवक, आधुनिक वेशभूषा में प्रवेश हुआ और मैनेजर साहब का कमरा खेल अन्दर आ गया। पीछे हाथ बाँधे, एक लिफ़ाफा हाथ में थामे उसने कहा, ''सर, मुझे बहुत जरूरी सूचना चाहिये?'' मैनेजर ने उसे बैठाया व पूछा, ''हाँ, बताओ मैं तुम्हारी क्या मदद कर सकता हूँ।'' उसने लिफ़ाफा आगे बढ़ाते हुए कहा, ''सर, इसमें मेरे पिताजी के बैंक के कुछ कागज़ हैं, मुझे पता करना है कि यह पैसा किसको मिल सकता है और मुझे यह पैसा लेने के लिये क्या-क्या कार्यवाही करनी होगी, जल्दी बताइए।'' लिफ़ाफा खोलते ही मैनेजर सकते में आ गया। उसने कहा, ''अभी इसी सप्ताह तो वो अपनी पैंशन लेकर गये हैं, मेरे साथ चाय पी है, क्या हुआ उन्हें? कब हुआ?'' लड़का बोला, ''परसों सुबह वो हमें छोड़कर चले गये।'' मैनेजर ने कहा, ''भले मानस डैथ सर्टीफिकेट लेने तक तो इन्तज़ार करते। इतनी भी क्या जल्दी है। आज तीसरा ही दिन है।'' उसने जवाब दिया, ''सर, वो तो आराम से मर गये। हमें अब समाज की भी लाज रखनी है। खर्च करूँगा उतने हिसाब से ही जो छोड़ कर गये हैं मेरे लिये।'' मैनेजर ने कम्प्युटर खोला तो देखा, उसकी आँखों में आँखें डालकर बोला, ''बेटा तेरे नाम कुछ नहीं है, उनके सारे खाते तुम्हारी माँ के नाम है। उसकी मर्जी है तुम्हें दे या न दे।'' लड़का बिजली सा उठा, कागज समेटे व गुस्से में बोला, ''मरता भी ढंग का काम न कर गया, अब करे ये बुढ़िया जो चाहे, मैं तो चला कल अपनी नौकरी पर।'' मैं पैसे के लिए पागल इस कलयुगी औलाद को ताकती रह गई।

वो समझदार बहू

शाम को गरमी थोड़ी थमी तो मैं पड़ोस में जाकर निशा के पास बैठ गई। उसकी सास माँ कई दिनों से बीमार है। सोच खबर भी ले आऊँ और बैठ भी आऊँ। मेरे बैठे-बैठे उसकी तीनों देवरानियाँ भी आ गईं। ''अम्मा जी, कैसी हैं?'' शिष्टाचारवश पूछ कर इतमिनान से चाय-पानी पीने लगी। फिर एक-एक करके अम्माजी की बातें होने लगी। सिर्फ शिकायतें, ''जब मैं आई तो अम्माजी ने ऐसा कहा, वैसा कहा, ये किया, वो किया।'' आध घंटे बाद सब यह कहकर चली गईं कि उन्होंने शाम का खाना बनाना है। बच्चे इन्तज़ार कर रहे हैं। कोई भी अम्माजी के कमरे तक न गया। उनके जाने के बाद मैं निशा से पूछ बैठी, ''निशा अम्माजी, आज 1) साल से बीमार हैं और तेरे ही पास हैं। तेरे मन में नहीं आता कि कोई और भी रखे या इनका काम करे, माँ तो सबकी है।'' उसका उत्तर सुनकर मैं तो जड़ सी हो गई। वह बोली, ''बहनजी, ये सात बच्चों की माँ है। इसने रात-रात भर गीला रहकर सबको पाला। ये जो आप देख रही हैं न मेरा घर, पति, बेटा, शानो-शौकत सब इसकी है। अपनी-अपनी समझ है। मैं तो सोचती हूँ इन्हें क्या-क्या खिला-पिला दूँ, कितना सुख दूँ, मेरा बेटा, इनका पोता सुबह-शाम इनके पास बैठकता है, ये मुस्कराती है, इन्हें ठंडा पिलाता है तो दुआएँ देती हैं। जब मैं इनको नहलाती, खिलाती-पिलाती हूँ, तो जो संतुष्टि मेरे पति को मिलती है, देखकर मैं धन्य हो जाती हूँ और वह बड़े ही उत्साह से बोली, एक बात और है ये जहाँ भी रहेंगी, घर में खुशहाली ही रहेगी, ये तो मेरा तीसरा बच्चा बन चुकी हैं।'' और ये कहकर वो रो पड़ी। मैं इस ज़माने में उसकी यह समझदारी देखकर हैरान थी और म नही मन उसे सराह रही थी।

वह युवक

हम पिछले सप्ताह ट्रेन में सफर कर रहे थे, हमें नीचे की 2 सीटें मिली थी और सामने वाली में एक छोटा सा परिवार बैठा था। पति-पत्नी और नन्हीं सी बालिका। देहरादून से गया तक वो भी हमारे हमसफर थे। बच्ची 2-2) साल की थी। कभी अपनी वाली खिड़की में तो कभी मेरे वाली। जिस तरफ भी प्लेटफार्म आता वो उसी तरफ आ जाती और खिड़की से झांक-झांक कर छोटी-छोटी चीज़ों की डिमान्ड करती। उसके पापा ने एक बार भी उसकी इच्छा को नहीं नकारा। वह भरसक प्रयत्न कर उसे हर चीज़ लाकर दे रहे थे। उसे गोदी में बिठा खिला-पिला रहे थे। जहां गाड़ी कुछ लम्बे समय के लिये रूकी, वो उसे घुमा भी लाये। इसके अलावा बाकी सारे काम अपने, पत्नि के व बच्ची के वह खुशी-खुशी कर रहे थे। मुझे उन्हें देखकर कई बार काफ़ी अचम्भा भी हुआ। भारत में पैतृक व पुरुषप्रधान समाज में ऐसा सुलझा इन्सान देखकर हैरानी होनी कोई बड़ी बात न थी। रात का खाना हमने इक्ट्ठा आर्डर किया और साथ में ही खाया। उसने सबकी प्लेटें फटाफट समेटी और बाहर फेंक आए। मुझसे रहा न गया। पूछ ही बैठी, ''बेटा, इतनी क्या जल्दी थी हम खुद कर लेते।'' वह बोला, ''नहीं आप भी मेरे माता-पिता के समान हैं इसमें क्या फर्क पड़ता है। 2 अपनी और 2 आपकी। दुआ ही तो मिलेगी।'' ''ये तो है।'' मैंने कहा। ''पर आजकल ऐसे प्यारे बच्चे कहाँ?'' उसके चेहरे के भाव बदल से गये। मैंने कहा, ''मैं कल शाम से तुम्हें देख रही हूँ, तुम लगातार काम किये जा रहे हो, थके नहीं।'' उसने जवाब दिया, ''आँटी, जब मैं 6 साल का था मेरी माँ मर गई, मेरा भाई 3) साल का था। लोगों ने पापा को दूसरी शादी करने को कहा। उन्होंने की नहीं। वह घर का सारा काम जैसे-तैसे करते और ड्यूटी पर भी जाते। मैं भी उनकी मदद करता। करते-करते आज ये वक्त आ गया और आँटी बिन माँ के बच्चे खुद ही सीख जाते हैं सारी जिम्मेदारियाँ निभाना।'' कहते-कहते उसकी आँखें भर आईं और हम सब शाँत से हो गये।

सोच

रोहन मेरे पड़ोस में रहता है। मैं भी इस स्थान पर कुछ दिनों पहले ही आई हूँ। वह छोटा सा बालक मात्र 10-11 बरस का है। अकसर मुझे देखते ही मुस्कुरा देता। मुझे भी उसे देखकर अच्छा लगता। एक दिन साथ की पड़ोसन ने बताया कि ये बालक मात्र 5 बरस का था जब इसकी माँ चल बसी। अब यह सौतेली माँ के पास है, उसके भी 2 बच्चे और हैं। माँ-बाप दोनों इससे अच्छा व्यवहार नहीं करते। फिर भी यह हमेशा मुस्कुराता इनका सारा काम करता रहता है। एक दिन ज़ोरों की बारिश हो रही थी। मैं गलियारे में बैठी बारिश का मज़ा ले रही थी कि रोहन भी हमारे घर आ कर मेरे पीछे खड़ा हो गया। पानी से भीगा वह और भी सिकुड़ा सा लग रहा था। मुझे चाय पीने का बहाना मिल गया। मैं उसे अन्दर ले गई। तौलिये से उसका सिर पोंछा, उसे कुर्सी पर बिठाया और चाय बनाने लगी। इसी बीच मैंने पढ़ाई के बारे में उससे कुछ बातें पूछनी शुरु की। गज़ब के जवाब थे उसके। मेरा मन प्रसन्न हो गया। मैंने उसे शाबाशी दी और चाय बिस्कुट खाने का आग्रह किया। जैसे ही उसने चाय का कप उठाया, उसकी बाजू पर नीला गहरा निशान मुझे पसीज गया। ''ये क्या हुआ?'' वो चुप शान्त बैठा रहा। मैंने फिर पूछा, उसने जवाब दिया, ''कल रात माँ की मदद कर रहा था, ठीक से काम न कर पाया, 2 रोटी मुझसे जल गई। माँ ने चिमटा मार दिया। बस ये ज़रा सी लग गई।'' मेरे मुँह से चीख निकल गई, ''जरा सी, ये जरा सी है। तेरे पापा ने कुछ नहीं कहा?'' ''वो क्या कहते, वो तो मुझे ही डाँटते। पर आँटी, एक बात बताऊँ, ये कोई बड़ी बात नहीं है। अगर आज मेरी माँ जिन्दा होती तो मैं बिगड़ जाता। ये दोनों सख्त हैं तो मैं अपनी कक्षा में प्रथम आता हूँ और कभी एक बड़ा अफसर बन ही जाऊँगा। फिर देखना.....'' कह कर वो तेज़ी से भाग गया और मैं उसकी बड़ी अनोखी सोच पर हाथ मलती रह गई।

वो सम्मान

पिछले माह मुझे एक कार्यक्रम में जाने का मौका मिला। मेरी एक परिचिता मुझे ले गई। उसने बताया कि यहाँ के महिला मंडल ने उन जोड़ों को सम्मानित करने के लिये बुलाया है जिन्होंने जीवन के 50 साल बिताए हैं। कार्यक्रम शहर के एक हाॅल में था। करीब 70-80 दम्पत्ति जोड़े बैठे थे। मासूम बुजुर्ग चेहरे। बोलती आँखें, शाँत चेहरे और इक ठहरा सा जीवन। सब एक-दूसरे को एक दयनीय नज़रों से देख रहे थे। कार्यक्रम शुरु हुआ। सूची में लिखे नामों के साथ सबको मंच पर आमंत्रित किया गया। शाॅल पहनाकर, स्मृति चिन्ह लेकर सब अपने- अपने स्थान पर आ गये। यकीन मानिये पूरे हाॅल में एक अजीब सा सन्नाटा था। मेरी परिचिता ने मुझे कुछ शब्द बोलने को मंच पर आमंत्रित किया। उनके लिये हार्दिक अभिवादन के सिवा दिल में और क्या हो सकता है। वो लोग मेरे सामने थे जिन्होंने अपने माता-पिता, अपने बच्चों और फिर अपने नाती-पोतों को पाला था, आज यहाँ निचुड़ी सी देह लिये बैठे हैं। सोचा मन की शंका मिटा ही लूँ। 4-5 लाइनें उनके स्वागत, उनकी सेहत और उनके भविष्य की उज्जवल कामना करके पूछ ही बैठी, ‘‘कृपया आज वो लोग हाथ उठायें, जो अपने बच्चों के साथ रह रहे हैं और खुश हैं।’’ सब लोग एक-दूसरे की ओर ताकने लगे जैसे मैंने कोई कितना बड़ा गलत प्रश्न पूछ लिया हो। सबके हाथ बंध गये, एक भी हाथ ऊपर नहीं उठा। मंच की ओर थी टकटकी बाँधे अनेक प्रश्नों को समेटे शून्य में ताकती आँखें।

वो परिवार

शादी का कार्ड आया, देखकर, मन हिलोरें लेने लगा। "कल बीना की शादी है। कितनी सुन्दर लगेगी वह दुलहन के लिबास में।" मैं इस स्थान पर नई हूँ, मुझे लोगों के बारे में अधिक मालूम नहीं। स्कूल में नौकरी करने की वजह से बीना ने शादी का कार्ड मुझे भी दिया। मैं अपने पति के साथ गंतव्य पर पहुँची। कुछ देर के बाद मेरी एक और साथी मेरे साथ वाली कुर्सी पर बैठ गई। मैंने उनसे बीना के माता-पिता के बारे में पूछा। उसने एक वृद्धा व वृद्ध व्यक्ति की तरफ इशारा किया, जो कि इतनी उम्र होते हुए भी साहस बटोर-बटोर कर, दौड़-दौड़कर काम कर रहे थे। सबका स्वागत कर बधाई लेना न भूल रहे थे। उसका छोटा भाई शेरवानी पहने आने वालों को पानी-ठंडा पिलवा रहा था व बड़ा भाई ऊपर के कामों में लगा था। "अरे, बच्चे तो छोटे-छोटे हैं परन्तु इसके मम्मी-पापा काफी उम्र के लग रहे हैं।" वो अध्यापिका बीना से अच्छी तरह परिचित थी। इस स्कूल में 7 बरसों से कार्यरत थी। वह बोली, "अरे मैम, शायद आपको मालूम नहीं बीना का अपना कोई भी नहीं है। 26 जनवरी 2001 के भूकंप में उसका सारा परिवार खत्म हो गया और ये बुजुर्ग भुज से बाहर तीर्थ यात्रा पर थे, लौटकर आये तो सब लुट चुका था। ये दोनों बच्चे, इसके भाई भी भूकंप की चपेट में काई त्रास्दी का शिकार हैं। ये सब कैंप में मिले थे। एक-दूसरे के नजदीक हुए। जान-पहचान बढ़ने पर ये बुजुर्ग इन तीनों को अपने पुराने घर ले आये, जो कि बच गया था। आज इतने समय से ये सब इक्ट्ठे रहते हैं, बीना व इन बच्चों में आपसी प्यार देखकर आँखें भर आती हैं। तीनों बच्चे माँ-बाप की पूरी परवाह करते हैं व माँ-बाप इनकी। कौन कह सकता है कि बीना इनकी बेटी नहीं? देखो, किस बात की कमी रखी है इन्होंने इसके लिये।" सुनकर मेरी आँखें बहने लगी। काश कि सबकी सोच ऐसी हो।

दादा-दादी

कृष्ण की शादी हुए 6 बरस हो गये हैं। वह परिवार दिल्ली से हमारे पड़ोस में रहने आया है। छोटा सा 4-4) साल का बच्चा, उसकी बीवी और वो। बच्चा दौड़ता-भागता, कई बार हमारे घर आ जाता, खेलकर वापिस चला जाता। मेरे घर में मेरे पोता-पोती हैं। बात-बात में दादा-दादी बोलते-बोलते कई फरमाइशें पूरी कराते रहते हैं। वह भी बीच-बीच में दादी बोल देता। मुझे अच्छा लगता। मैं एक दिन शाम को बच्चों को घूमाने ले गई तो वह भी मेरे पीछे-पीछे आ गया। उसकी मम्मी भी उसके पीछे दौड़ती चली आई। बात-बात में बच्चे ने मुझे 3-4 बार दादी कहा और ईशारा कर-करके माँ को बताया कि मैं आनन्द की दादी हूँ। फिर पूछने लगा, ''माँ, मेरी दादी क्यूँ नहीं आती?'' माँ का जवाब था, ''आयेगी।'' फिर मैं पूछ ही बैठी, ''इसकी दादी है?'' ''हाँ मैम, है पर हमारी एक भूल की वजह से हमसे नाराज है। उन्होंने हमें घर से निकाल दिया। हमने अपनी मर्जी से शादी की थी। उन्हें ये मंजूर न हुआ। हमने इसके लिये कई बार माफी माँगी, उन्हें मनाने की कोशिश की परन्तु नाकाम। इस बच्चे के होने पर हम घर भी गये परन्तु उन्होंने मिलने व बात करने से इन्कार कर दिया। हम लौट आए। कभी फोन करें तो उठाते भी नहीं।'' मैं सोचने लगी इन बड़ों के काम या गलतियों में इस नन्हें का क्या कसूर।

ससुराल

शादी के बाद पहली बार रीना घर रहने आई। बड़ी मुश्किल से दस दिन रहने की अनुमति मिली थी। घर पहुँचते ही उसकी निगाहें माँ के कमरे, घर के कोने-कोने पर घूमने लगी। मैं हैरान थी ऐसा क्यूँ? कुछ देर बैठकर उसने मेरे कमरे का कोना-कोना झाड़ दिया। परदे निकाल कर दूसरे बदल दिये। हर चीज़ साफ कर दी। मुझे कुछ अजीब सा लगा। वह दस दिन रही, उसने घर का कोना-कोना सँवारा। मुझे किसी भी काम को हाथ न लगाने दिया। मेरे पास यह बच्ची 23 साल रही, कभी-कबार कोई भी काम अपनी मर्जी से करती तो करती वरन् हँसती-खेलती बहाने बनाकर टाल ही जाती मेरा काम। छोटे बच्चे की तरह लिपटकर फरमाइशें पूरी कराती। पर अब ऐसा कुछ भी न था। कल उसे वापस जाना था कि मुझसे रहा न गया। पूछ ही बैठी कि इतना बदलाव मात्र महीने भर में कैसे आ गया। वो मुस्कुरा दी फिर मुझसे लिपट कर बोली, "माँ, मेरे ससुराल में सब सुबह जल्दी उठ जाते हैं, ज़रा सी आहट सुन मैं भी जग जाती हूँ, फिर सारा दिन माँ, बापू व दादी सास, दीदी सब मिल-मिलकर काम करते हैं और दिन का पता भी नहीं चलता कहाँ निकल जाता है? रात को थक कर एकदम नींद आ जाती है, यहाँ आने से पहले महसूस हुआ कि माँ, तू अकेली कितनी थक जाती होगी, दूसरे के घर जाकर सबका ख्याल रखना फर्ज़ और अपनी माँ का तिल भर भी ध्यान न रखना, कितना बड़ा अन्याय?" "अरे पगली, ऐसा क्यों सोचा तूने?" मैंने कहा तो वह फफक पड़ी और बोली, "माँ, जब समय था तो समझ न थी, आज समझ आई तो समय ही नहीं है। पर तेरा काम करके मुझे पहली बार जो सुकून मिला है मैं ही जानती हूँ।"

पढ़ाई

आज दिव्या दोपहर में अपने कमरे में गई, लेकिन अभी शाम के 8 बजने को आये, बाहर नहीं निकली। ये बच्ची हमारे पड़ोस में ही रहती है। मैं अपना काम निबटाकर बाहर निकली, तो उसकी मम्मी से राम सलाम हुई। वो मुझे आज कुछ खिन्न सी नज़र आई। मैंने कारण पूछा तो उसने बताया कि उसकी बेटी का रिज़ल्ट आया है, वो अपनी कक्षा में प्रथम आई है। उसने आगे पढ़ने की इच्छा प्रकट की है। लेकिन उनकी जाति में ज़्यादा पढ़े-लिखे लड़के नहीं मिलते। वो मुझसे पूछने लगी, "बताओ, बहनजी, अब ऐसे हालात में अगर मैं उसे पढ़ा दूँ, तो ये सारी उमर इस घर पर ही बैठी रहेगी, आज दोपहर से कमरा बंद करके बैठी है, रोये जा रही है। न कुछ खाया, न नीचे आई है।" उसकी बात सुनकर मुझे एक झटका लगा। मैं अपनी पड़ोसिन को अपने घर ले आई। वह बहुत दुविधा में थी। घर वालों का दबाव, बच्चे का प्यास, उसका भविष्य सब कुछ उनके चेहरे पर स्पष्ट झलक रहा था। मैंने कुछ देर इधर-उधर की बातचीत करके उन्हें सहज करने की कोशिश की, फिर कहा, "देखो दिव्या की मम्मी, हम और आप बरसों से अपनी गृहस्थी चला रहे हैं, कितने उतार-चढ़ाव इसमें देखने पड़ते हैं। आप मुझे बताओ कौन सा रिश्तेदार मदद करने या हमारी समस्या को सुलझाने आया? और हाँ, हम किसकी गृहस्थी में कुछ निपटाने गये? सबको अपनी-अपनी ज़िन्दगी खुद ही निपटानी होती है। दिव्या आपकी बेटी है और आजकल बेटा-बेटी में क्या फर्क? उसे पढ़ाओ और एक अच्छा अफ़सर बनाओ, बिन जाति-पाति देखे अनगिनत रिश्ते आएँगे। एक अच्छा लड़का देखकर शादी कर देना। अगर आपकी जाति में लड़के नहीं पढ़ते, तो इसमें दिव्या का क्या

लगातार . . . .

कसूर? वो लाखों में एक है। आगे आपकी मर्जी।'' वो एकटक मेरी ओर देखती रही और मेरा हाथ थामकर तेज़ी से अपने घर की ओर ले गई व भरी आँखों से दिव्या के कमरे तक। दरवाज़ा खटखटाया, दिव्या ने दरवाज़ा खोला। आँखें सूजी, चेहरा पीला हुआ पड़ा था। माँ ने उसे बाँहों में भरा और बोली, ''बेटी, पोंछ दे अपने आँसू, मैं तुझे पढ़ाई कराऊँगी, भले ही लोग कुछ भी कहें। तेरी आंटी ने मेरी आँखें खोल दी।'' दिव्या खुशी से और भी ज़ोर से रोने लगी और बोली, ''सच माँ, थैंक यू आँटी, थैंक यू।''

दान

सिद्धू वकील शहर के जाने-माने वकीलों में गिने जाते हैं। बड़ा बंगला, भले बच्चे, सुशील बीवी, क्या नहीं है उनके पास। उनके घर में नाती हुआ। मैं भी नन्हें मेहमान को देखने चली गई। घर में चारों ओर रौनक ही रौनक। उसके ननिहाल से भी लोग आए हुए थे। अन्दर वाले कमरे में भीड़ थी। सिद्धू जी बाहर वाले बड़े कमरे में बैठे किताबें पलट रहे थे। मुझे देखकर उन्होंने अपने कमरे में बैठने को कहा। चारों ओर किताबें ही किताबें। बड़ा सोफा, कुछ कुर्सियाँ, मेज़ सब कुछ था वहाँ। औपचारिकता ही बातचीत खत्म हुई। मैंने उन्हें बधाई दी और बात आगे बढ़ाने लगी। पूछ ही बैठी, ''सिद्धू साहब, आपके पिताजी का भी यही व्यवसाय रहा?'' ''नहीं, वो एक जुलाहे हैं, उन्होंने कड़ी मेहनत करके मुझे पढ़ाया। मैं बचपन से पढ़ाई में अच्छा था, लेकिन घर की परिस्थितियाँ अनुकूल न थीं। मेरी 2 बहनें, दादा-दादी और एक बुआ भी हमारे साथ थी। पिताजी अकेले कमाने वाले थे। रात-दिन काम करते। मैं भी समय मिलते ही उनकी मदद करता। साथ-साथ मैंने पढ़ाई भी की। वकालत की पढ़ाई के लिये पैसे न थे। पिताजी ने अपनी दुकान बेच दी, माँ ने अपने इक्के-दुक्के गहने। मैं वकील बन गया, मेरा काम भी अच्छा चल निकला। मैंने प्रण किया कि मुझे जो भी कुछ आयेगा उसमें से 10ः मैं उन बच्चों के लिए रखूँगा जो पैसे की कमी के कारण पढ़ नहीं पाते। भगवान का शुक्र है मैं आज कुछ कर पाया। मैंने ट्रस्ट बनाया है, मेरे साथ और लोग भी जुड़े हैं। मैंने कक्षा 1 से 8 तक का स्कूल खोला है। किताबें, खाना, वर्दी सब फ्री हैं। करीब 700 बच्चे हो गये हैं और मुझे सुकून है। कहते-कहते उनकी आँखें भर आईं।'' उनके इस निर्णय पर मुझे बहुत खुशी हुई।

परीक्षा

लाजवंती की शादी को मात्र 6 बरस ही हुए थे कि उसके पति सुरेश की तबीयत खराब हो गई। सुरेश को पता चला कि उसे कैंसर है, उसकी चिन्ता बहुत बढ़ गई। सोचले लगा, उसके बाद उसके परिवार की परवरिश, उसकी दो बहनों की शादी, उसकी माँ की देखभाल, सब सोचकर वह काँप उठा। पत्नि को पता चला तो वह उसे सांत्वना देने लगी कि सब परमात्मा पर छोड़ दो, जो होगा वह उसकी मर्ज़ी से ही होगा। लाजवंती हर काम में बहुत ही सुलझी औरत थी, परन्तु पढ़ी-लिखी न थी, इस बात की चिन्ता सुरेश को खाये जा रही थी। घर की पूरी ज़िम्मेदारी लाजवंती पर आने वाली थी। उसके मेहनती स्वभाव को देखकर सुरेश ने उससे बात करने की सोची। उसे बुलाकर कहने लगा, "लाजवंती, तुम एक बुद्धिमान, कुशल स्त्री हो, समय अच्छा नहीं है, सोचता हूँ, क्या अच्छा हो कि तुम दसवीं की परीक्षा दो और कोई नौकरी करो, मेरे बाद तुम्हें सबको संभालना है।" सुनकर लाजवंती फफक़ पड़ी, "मैं अनपढ़ गंवार जिसे अ नहीं आता वो दसवीं करेगी, आपने सोच भी कैसे लिया?" उसकी पूरी रात सुरेश की बात सोचते-सोचते निकल गई। काले दिन व लम्बी रातें नज़र आने लगी। सुबह उठकर उसने अपनी छोटी बेटी जो नर्सरी में जाती थी, की किताब उठाई, पन्ने पलटने लगी कि आँखों से आँसू रुक ही न रहे थे। सुरेश ने उसे देखा व पास आकर बोला, "अरे वाह, ये आज से ही शुरु कराता हूँ।" उसने किताब के चित्र व अक्षर उसे पढ़ाये। सलेट पर अ-आ, 1-2-3 लिखकर दिया। 2-3 दिन में उसने मेहनत व लगन से अच्छे परिणाम दिय। वह किताबों को पढ़ने व समझने लगी। मात्र 3 सालों में उसने दसवीं की परीक्षा दे डाली व उत्तीण हुई। इसके बाद जे.बी.टी. की। इस दौरान सुरेश भी बहुत बीमार रहने लगे और उनका निधन हो गया। लाजवंती पर ज़िम्मेदारियों का पहाड़ टूट पड़ा। उसे सरकारी स्कूल में नौकरी मिल गई। जैसे-तैसे अपना फ़र्ज निभाया। आज उसके बच्चे अपनी-अपनी ज़िन्दगी जी रहे हैं। परन्तु उसका जीवन हमें हमेशा एक अलग सी सीख देता रहेगा कि इन्सान ग़र कुछ चाहे तो क्या नहीं हो सकता।

26 जनवरी

आज नया साल चढ़ा है। अभिमन्यु को गये पूरे तीन साल हो गये। वीराँ हर रोज़ घर का सारा काम निबटाकर बाहर आँगन में बैठ जाती। जैसे ही उसे कोई साईकिल की घंटी बजती सुनाई देती, उचक कर देखती। डाकिये के आने का समय है। सरकार ने अभिमन्यु को वीर चक्र देने की घोषणा की थी। पूरा सप्ताह बीत गया। वीरां की उत्सुकता बढ़ने लगी। आज इतवार है, कल मेरा संदेश जरूर आयेगा। सोच-सोचकर उसका दिन काटे नहीं कट रहा था। बैठे-बैठे उसकी आँखें छलछला उठीं। वह अतीत के घेरे में घिरी पाँव से ज़मीन खोदने लगी। यही आँगन, यही घर, वो सामने वाला बड़ा पीपल का पेड़, जहाँ से घर तक वो लाल जोड़े में सिमटी सी धीमे-धीमे कदमों से घर की दहलीज़ पार करके आई थी। घूंघट की ओट से उसने अभिमन्यु को सफेद कुरते पजामें में गुलाबी पगड़ी बांधे देखा था। लम्बा चैड़ा, सुन्दर राजकुमार सा युवक। बस देखते ही रह गई थी। 2-4 दिन रसमें निभाकर वो दोनों मसूरी घूमने निकल गये थे। शान्त स्वभाव, मुस्कुराते चेहरे के साथ सप्ताह भर बिता कर घर वापस आ गई थी। अभिमन्यु मात्र 20 दिन की छुट्टी लेकर आया था। कब बीत गई पता ही न चला। फिर वह अपने गंतव्य की ओर रवाना हो गया था। अपनी बटालियन का मुखिया था वह। उसने घर से ज्यादा समाज व देश को महत्व दिया। वीरां पूरे 6 माह घर पर रही। घर का सारा काम सीख, सबको पहचानने की पूरी कोशिश की। फिर अभिमन्यु आया व उसे अपने साथ ले गया। इस बीच उनका नन्हा वंश आया। दुनिया ही बदल गई। दिन-रात अपनी रफ्तार से बीतने लगे। वीरां वंश को सुलाने दूसरे कमरे में गई। घंटे भर बाद जब वापिस आई तो अभिमन्यु अपना सामान बांध रहे थे। वीरां ने मज़ाक किया, ‘‘कहाँ जा रहे हो इतनी रात में?’’ उसने वीरां की आँखों में आँखें डालकर कहा, ‘‘माँ का संदेशा आया है, बस निकल रहा हूँ।’’ ‘‘अकेले ही?’’ वीरां ने

लगातार .....

कहा। ‘‘हाँ, वहां तुम्हारा क्या काम? मैं कारगिल जा रहा हूँ।’’ बात पूरी भी न हुई थी कि घंटी बजी। बाहर गाड़ी थी। हाथ हिलाता हुआ, मुस्कुराता हुआ अभिमन्यु गाड़ी में बैठ चला गया। वीरां बुत सी बनी दरवाज़े पर खड़ी जाती गाड़ी को देखती रही।

बस वो उनका आखिरी मिलन था। ठीक 22 दिन बाद अभिमन्यु तिरंगे में लिपटा घर आ गया। उसने आतंकवादियों के ठिकानों को ढूंढा व उड़ा दिया था। उसके दाहिने हाथ में गोली लगी थी। उसके बावजूद भी उसने 3-4 और लोगों को मौत के घाट उतार दिया। सरकार ने उसकी इस शहीदी पर उसे ‘‘वीर चक्र’’ देने का ऐलान किया था।

उसकी तन्द्रा भंग हुई। छोटा देवर अंकुर पास खड़ा था। बोला, ‘‘भाभी क्या सोच रही हो? माफ करना, कल रात मुझे घर आने में देर हो गई। जब मैं कल दोपहर में खाना खाकर जा रहा था तो मुझे हरिया ने यह पत्र दिया था। रात आप सो चुकी थीं।’’ वीरां ने पत्र खोला, पढ़ा। अभिमन्यु का वीरचक्र लेने के लिये उसे दिल्ली बुलाया गया है। उसकी आँखें बुरी तरह छलछला उठीं, वह कमरे में जाकर ज़ोर-ज़ोर से रोने लगी, कि एक आवाज़ ने उसके सारे आँसू सुखा दिये। ‘‘उठो, वीरां तुम एक आम औरत नहीं, भारत माँ के वीर शहीद बेटे की पत्नी हो।’’ वह उठी उसने आँखें पोंछी, मुँह धोया व तैयारी करने लगी दिल्ली जाने की जहाँ उसकी सफ़ेद साड़ी पर रंग-बिरंगे गुलाल बिखरेंगे।

समझदारी

नीमा की शादी की तारीख तय हो गई थी। वह दिल्ली में नौकरी करती थी। माँ-बाप ने उसे बताया व कहा कि वह शादी से हफ्ता भर पहले घर आ जाये और अपने लिये अपनी मनपसंद के शादी के जोड़े खरीद ले। उसने बताया कि आॅफिस में उसे बहुत काम है, 2 दिन पहले आयेगी और फिर बाद में 10-15 दिन ससुराल की रसमें निभाएगी। माँ ने अपना मन मसोस लिया, पर उसे अच्छा लगा कि उनकी बेटी संस्कारी है, अपने कत्र्तव्यों के प्रति सजग है। उन्होंने कुछ पैसे बेटी के खाते में भेज दिये और कहा वक्त निकालकर अपनी किसी सहेली के साथ जाकर खरीददारी कर ले।

शादी का समय नज़दीक आ गया। दो दिन पहले नीमा घर पहुँची। माँ की उत्सुकता का ठिकाना ना था। उसने नीमा को शादी के जोड़े दिखाने को कहा। नीमा ने सूटकेस खोला, उसमें से एक सादा सा लाल रंग का कुरता, एक सुन्दर सी चुनरी निकाली व माँ को दे दी व बोली, ‘‘माँ, शादी का दिन सिर्फ एक ही है और बस फेरे व विदाई ही तो है। यह मैंने उस वक्त के लिये मात्र 2500/- रू. में ले ली और विदाई पर मैं अपना सगाई वाला सूट पहनूंगी।’’ माँ के मुँह से निकला, ‘‘ऐसा क्यूँ? मैंने तो तुझे काफी पैसे भेजे थे।’’ नीमा बोली, ‘‘हाँ माँ, भेजे थे, पर एक दिन के लिये इतने पैसे खर्चना कौन सी अकलमन्दी है। मुझे बाद में काफी चीज़ों की ज़रूरत होगी, मैं उन पैसों से खरीद लूँगी। और आपका इतनी मेहनत से कमाया पैसा अच्छे से व्यवहार में लाऊँगी।’’ उसकी ये बातें सुनकर माँ उसे देखती रह गई और उसे गले से लगा लिया।

गलती

मुझे स्कूल से घर आकर 1-1) घंटा आराम करना बहुत अच्छा लगता है। उस दिन जैसे ही मैं लेटी, मुझे किसी बच्चे की चीखों ने बेचैन कर दिया। उठी व गलियारे में खड़ी होकर अन्दाज़ा लगाने लगी कि कौन हो सकता है? ध्यान से सुना तो पड़ोस वाली औरत गुस्से में अपनी बेटी को पीट रही थी। "लड़की तो इतनी होशियार व सुशील है, पर इसकी माँ को इतना गुस्सा क्यों आया?" मैंने सोचा व सीढ़ियाँ उतरकर उनके घर जा पहुंची। देखा वीनू ज़ोर-ज़ोर से रो रही थी, उसके कान से खून बह रहा था। माँ पास खड़ी फिर भी चिल्लाए जा रही थी। मुझे देखकर माहौल शान्त हुआ। मैंने कारण पूछा, तो पता चला वीनू के 2 नम्बर हिन्दी में कट गये थे जिसकी वजह से उसकी माँ ने क्रोधित होकर उसे डंडे से मारा व बच-बचाव में डंडा वीनू के कान पर लग गया व खून बहने लगा। मैंने समझाने की कोशिश की, परन्तु उसकी माँ की दलीलों के सामने मेरी एक न चली। मैं घर वापस आ गई।

कुछ दिनों बाद पता चला कि आठवीं की परीक्षा में वीनू नकल करते पकड़ी गई और उसके माता-पिता को मुख्याध्यापक ने आॅफिस में बुलाया। दोनों में काफी बहस हुई व मुख्याध्यापक ने वीनू को स्कूल से निकाल दिया। स्थिति गंभीर हो गई। वीनू को अपने मामा के पास पढ़ने के लिये भेज दिया गया। उसका मन तनिक भी वहाँ जाने को न था। गर्मियों की छुट्टियों में वो घर आई हुई थी। उसकी छोटी बहन का जन्मदिन था। पड़ोसी के नाते हमें भी जाना था। मैं अन्दर वाले कमरे में बैठ गई और वीनू

लगातार .....

मेरे लिये पानी लेकर आई। बाहर जन्मदिन की त्यारियाँ चल रही थी। वीनू के चेहरे पर तनिक भी खुशी न थी। मैंने उससे कारण पूछा। वो बचपन से मेरे साथ खुली हुई है। उसकी आँखें डबडबा गईं, आवाज़ काँपने लगी, बोली, ''आँटी, आपको सब पता है, उसे दिन मुझे कितनी मार पड़ी, उस डर से मैंने 3-4 प्रश्नों के उत्तर किताब से फाड़कर रख लिये थे, उनमें से 2 प्रश्न आए। मैं देखने लगी और पकड़ी गई। फिर भी माँ को समझ नहीं आया, मुझे मामा के घर भेज दिया, वहाँ स्कूल जाने से पहले मामी के साथ काम कराओ, उनके बच्चे संभालो, शाम को रसोई बनवाओ, फिर भी अहसान व तानें सुनो।'' ''तू वापस आ क्यूँ नहीं जाती?'' ''कैसे आऊँ, मम्मी-पापा की इज्ज़त का सवाल है, वो अब मुझे यहाँ लाना नहीं चाहते।'' बोलकर वो तेज़ी से मेरे कमरे से चली गई।

मंत्र

विजय का जन्मदिन है, घर पर सुबह से ही माँ ने रसोई संभाल रखी थी। बच्चे इधर-उधर का काम फटाफट निबटा रहे थे। विजय का घर मेरे घर के पास ही है। अच्छी जान-पहचान है, पर सिर्फ थोड़ी सी बातचीत ही होती है हम दोनों परिवारों में। अपनी-अपनी व्यवस्तताएँ सबको जकड़े हुए हैं, फिर भी हम एक-दूसरे के दुःख-सुख में चले ही जाते हैं। सुबह से चार बार विजय घर के चक्कर लगा चुका है। वह मुझे बुलावा दे चुका है, पर बार-बार पूछ रहा है, ''मैम कब आओगे?'' उसकी उत्सुकता, प्यार मुझे ज़्यादा देर तक रोक ना पाया। मैं शाम को करीब 6 बजे उनके घर चली गई। बड़ी शालीनता से उसके मम्मी-पापा ने मुझे बिठाया। बच्चे अपने दोस्तों के आने का इन्तज़ार करने लगे। उसके पापा सब बच्चों से बहुत प्यार से बात कर रहे थे। विजय कक्षा में मुझे वक्त-वक्त पर गाना सुनाता है, उससे मैंने गाना सुनाने को कहा। उसके पिता बीच में ही बोल पड़े, ''मैडम, आज इससे गाना नहीं, संस्कृत के मंत्र व श्लोक सुनिये, ये आपको गाकर सुनाएगा।'' विजय ने गाना शुरू किया। लम्बे-लम्बे मंत्र उसे कंठस्थ थे। इतना छोटा बच्चा व इतने कठिन शब्दों का उच्चारण, मैं हतप्रभ थी। समाप्ति पर पूछ ही बैठी, ''ऐसे इसने कैसे याद किये?'' उसके पापा बहुत ही सहजता से बोले, ''मैडम, जब ये पैदा हुआ, तब से 3-3) वर्ष तक इसकी दादी जब भी इसे सुलाती, तो इन्हीं मंत्रों का उच्चारण करती, ये सुनता-सुनता सो जाता और जब इसने बोलना चालू किया तो ये सब साथ-साथ बोलने लगा और पता ही न चला कब कंठस्थ हो गये। अब हर रोज़ शाम की संध्या में ये ही हमें सब हर रोज़ सुनाता है।'' मेरा मन खुशी से झूम उठा कि आज इस कलयुगी माहौल में भी ऐसा सुन्दर माहौल बन सकता है ज़रा सी सूझ-बूझ से।